ISSN : 2583-3189 (E), 2583-0775 (P)
Year-02, Volume-02, Issue-02

खुशवन्त कुमार माली,
Page No. 72 - 78

AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

l|ifl) dFkkxzUFk *i´pr=* e| unh foe’k

ORIGINAL ARTICLE

Author

[k’koUr dqekj ekyh,
शोधार्थी, संस्कृत विभाग,
जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय,
जोधपुर, राजस्थान, भारत

’kk/k lkj

ufn;k bl egkn’k dh vkRek gA Hkkjr dh v{k..k lkL—frd fojklr dk lthou bUgh l çklr gvk gA bUgh d rVk ij rhFk&Luku] è;ku] ti&ri] vkJe vkfn lek–r Fk tk v|kofèk i;Ur bl Hkkjr Hkfe ij –f"Vxkpj gkr gA fooP; 'kkèk çdj.k lçfl) dFkklkfgR; ipr= e Hkh ç–fr o.ku d Øe e fofoèk çlxk e vkyadkfjd ukf;dk] ifrr&ikouh] nolfyyk] ikiekpuh rFkk Hkfxuh o ekrLo:ik vkfn :ik lfgr ,o iFkd ukekYy[k o.ku d lkFk ufn;k –f"Vxr gkrh gA ;g Lo:i o.ku vR;r ekguh; ,o fof'k"V g ydfu orekU ifj–'; e budk Lo:i ifjorluh; gA bue ,d Hkh unh vkt çn"k.k eä ugh jgh gA fgeky; l çokfgr lnkuhjk xxk] flUèk] ;euk vc ekuoh;—R;k] vk|kfxd vif'k"V] okfgr ey o vU; fofoèk xfrfofèk;k u bud ty dk vi; :i e ifjorfrr dj fn;k gA çn"k.k fu;=.k ,o fuokj.k gr| ljdkjk }kjk dkfV'k ç;klk d vUurj Hkh ;euk vkt Hkh er unh gA xxk vkpeu gr| mi;ä ugh gA l{ki e lkj Lo:i bl 'kkèki= dk mn'; g fd eu"; ufn;k d ikjkf.kd egRo rFkk lkL—frd vonku dk ân; e èkkj.k dj o Lor% l{e ç;klk }kjk Lo; çj.kk ydj bud lj{k.k] lo)u o iuHkj.k gr| ç;kl dj ldxA Hkxoku egkdky d uxj rV ij fLFkr f'kçk l çj.kk ydj bl çnf"kr u dju dk ldYi èkkj.k dj ldxA ty gh thou g blh vkèkkj ij iFoh xg ij thou lQy gvk gA o"knj o"k c<r unh çn"k.k dk dçHkko ekuo d LokLF; ,o vklr vk;| ij n[kk tk ldrk g tk mÙkjkrj ?kV jgh gA çnf"kr ty l flpkbZ o i;ty mi;kx u vxfur jkxk dk tUe fn;k gA bl i= }kjk unh lj{k.k] lo)u dh f'k{kk nh tk ldxhA bl gr| eu";k dh l|lr vkRek e çdk'k dk lpkj gkxk ftlls çj.kk ydj o bl gr| vxlj gk ldxA

e|[; 'kCn

i´pr=] unh] çn"k.k] i;dk'k-

विष्णुशर्मा प्रणीत विश्वविश्रुत् कथाग्रन्थ 'पञ्चतन्त्र' पञ्चतन्त्र समन्वित हैं जो नीति कथाओं में अग्रगण्य है। नष्ष अमरशक्ति के पुत्रों को न्याय, नीति, लोकाचार दर्शन, परोपकार आदि श्रेष्ठ गुणों की सृजना हेतु विष्णुशर्मा द्वारा उपदेशपरक इस महनीय शिक्षा के क्रम में प्रकृति के विविध घटकों यथा नदी, पर्वत, पशु–पक्षी, निर्झर, ऋतुएं आदि का सांगोपांग निदर्शन हुआ हैं। अत्यन्त रोचक व विशिष्ट दृष्टांत यह ही है कि इसके समस्त पात्र पशु–पक्षी

(जीव–जन्तु) हैं। उनके माध्यम से मनुष्यों को आदर्श जीवन दर्शन का अमृतपान करवाया गया हैं। दृष्टव्य है नदी विषयक वर्णन यथाः

पञ्चतन्त्र कथाग्रन्थ में नदियों के अनेक स्वरूप निदर्शित है। वे अनेक रूपों में महनीय, परोपकारी लोकमंगल का पुण्यकर्म कर रही है। कथामुख में ही कवि ने नदियों से रक्षा की प्रार्थना कर उनके प्रति कर्त्तव्यनिष्ठता एवं श्रद्धा का दिग्दर्शन करवाया हैः

सिद्धा नद्योऽश्विनौ.......।[1]
(नदी, पर्वत आदि हमारी रक्षा करें।)

उपर्युक्त दृष्टान्त नदियों के उद्गम, प्रवाह और कार्यों को उद्घाटित करता हैः
प्रवर्तन्ते क्रियाः सर्वाः पर्वतेभ्यः इवापगाः।।[2]
(पर्वतों से ही नदियाँ निकलकर समस्त कार्यपूर्ण करती है।)

उनके आकारानुसार जल से परिपूर्ण होने का उदाहरण भी दर्शनीय हैः
सुपूरा स्यात्कुटिका सुपूरो मूशिकाञ्जलिः।[3]
(छोटी नदी शीघ्र ही परिपूर्ण हो जाती है।)

नदियों के मोहनीय महत्त्व को उद्घाटित करता यह दृष्टान्त तो हृदयग्राही एवं हृदयस्पर्शी है जो वज्रहृदय में भी उनके प्रति श्रद्धा उत्पन्न करा देंः

जातस्य नदीतीरे तस्यापि तृणस्य जन्मसाफल्यम्।
यत् सलिलमज्जनाकुलजनहस्तालम्बनं भवति।।[4]

नदी किनारे उत्पन्न हुए उस तृण का भी जन्म सफल है, जो जल में डूबते समय व्याकुल हुए लोगों का सहारा बनता है।

समुद्र के विशाल हृदय एवं स्वभाव को व्याख्यायित करता यह उदाहरण कितना सुन्दर हैः
नापगानां महोदधिः।[5]
(समुद्र अनेक नदियों के समागम से भी तृप्त)

नदियों में स्नान और देवपूजा का दृष्टान्त नित्य प्रवाहशील भारतीय संस्कृति को अग्रजन्मना ही सिद्ध करता हैः

अथैव तस्य गच्छतोऽग्रे काचिन्नदी समायाता।
तां दृष्ट्वा मात्रां कक्षान्तरादवतार्य कन्थामध्ये सुगुप्तां निधाय स्नात्वा।[6]
(नदी में देवशर्मा का स्नान और देवपूजा)

विष्णु शर्मा द्वारा प्रदत्त यह आभाणक और प्रशस्ति तो सम्पूर्ण संस्कृत वाङ्मय में विशिष्ट ही है जो वर्तमान समाज के यथार्थ का उद्घाटनकर्ता हैः

नार्यश्च सहक्प्रभावास्तुल्यानि कूलानि कुलानि तासाम्।
तोयैश्च दोशैश्च निपातयन्ति नद्यो हि कूलानि कुलानि नार्यः।।[7]

नदियों और नारियों का प्रभाव समान होता है। नदियों के दोनों कूल (किनारे) स्त्रियों के दोनों कुल (मातृ–पितृ) के समान है क्योंकि नदियाँ जल से अपने दोनों किनारों को और नारियाँ दोषों से अपने दोनों कुलों को पतित करती है।

पंचतंत्र में वर्णित नदियों का स्वरूप सर्वाधिक रूप से स्नान और देवपूजन विधि सम्पन्न करने में ही निरूपित है, उदाहरण दर्शनीय हैः

अथ वज्रदंष्ट्रश्चतुरकमाह—भोश्चतुरक, यावदहं नदीं गत्वा स्नानं देवतार्चनविधिं कृत्वागच्छामि, तावत्वयात्रा [8]

वज्रदंष्ट ने चतुरक से कहा – हे चतुरक! जब तक मैं नदी में जाकर स्नान और देवपूजन विधि करके लौट न आऊं तब तक तुम यहां सावधानी (चौकन्ने) से रहना। इस प्रकार कहकर वह नदी में (स्नानादि करने के लिए) चला गया।

ग्रीष्मऋतु में क्षुद्र नदियों के यथार्थ को उद्घाटित करता यह उदाहरण भी द्रष्टव्य हैः

उच्छिद्यन्ते क्रियाः सर्वा ग्रीष्मे कुसरितो यथा।।[9]
(गर्मी में छोटी—छोटी नदियों के सब कार्य नष्ट हो जाते हैं।)

इसी प्रकार नदियों में जलागमन से परिपूर्णता को व्याख्यायित करता निम्न उदाहरण हैः

सुपूरा स्यात्कुनदिका सुपूरो मूषिकाम्जलिः।[10]
(छोटी नदी आसानी से भर जाती है।)

नदियों के प्रवाह की दिशा को निर्देशित करता निम्न दृष्टान्त अति सामान्य है परन्तु फिर भी विशिष्ट हैः

सम्पदो नावगच्छति प्रतीपमिव निम्नगाः।[11]
(नदियाँ कभी उल्टी नहीं बहती है।)

नदियों के किनारे मार्गों का होना भी भूगोल की प्रामाणिकता ही तो हैः

मार्गासन्नं नदीतममासाद्य कृतकुशापपहा निमालियनयनऊर्ध्वबाहुरर्ध पादस्पृष्टभूमिः।[12]
(मार्ग के पास वाली नदी)

नदियों की पवित्रता, सहिष्णुता भी प्रासंगिक ही हैः

अथ तस्य तां धर्मोपदेशानां श्रुत्वा षशक आह—भोः भो! कपिम्जल। एषः नदीतीरे तपस्वी धर्मवादी तिष्ठति।।[13]

उनके किनारों पर तपस्या स्थल (साधनास्थल) भी अर्क पवित्रता, प्रकर्शता, फलसिद्धिप्रदाता, इष्टप्राप्ति का ही हेतु हैः

कस्मिंश्चिन्नदीनट एकत द्वित—त्रिताभिधानास्त्रयोऽपि भ्रातरो मुनयस्तपः।[14]
(किसी नदी—तट पर एकत, द्वित और गित नामक तीन भाई मुनि तप करते थे।)

तीर्थों, घाटों और तटों पर नदी स्नान की परम्परा भारतीय संस्कृति को जीवन्त ही करती है।

अथ देव्यायतने गत्वा स्नानार्थं नद्यामवतीर्यं यावत्स्नानं करोति।[15]
(देवी के मन्दिर में जाकर स्नान के लिए नदी में प्रविष्ट हुई।)

उनके पास स्थित चारागाह पशुओं के लिए परम आनन्द कारक हैः

श्रृगाल आह – 'माम यद्येवं तदस्ति मरकतसदृशशष्प—प्रायो नदीसनाथो रमणीयतरः प्रदेशः।'[16]
(मरकत मणि के समान हरी—हरी घास से भरा हुआ नदी के पास एक सुन्दर स्थान है।)

शिकार (भोजनग्रहण) करने से पहले स्नान के महत्त्व एवं आवश्यकता को निर्देशित करता यह उदाहरण कितना सहज हैः

ततस्तं हस्त्वा श्रृगालं रक्षकं निरूप्य स्वयं स्नानार्थं नद्यां गतः।[17]

लंबकर्ण को मारकर उद्यत सिंह श्षाल को रक्षक नियुक्त कर स्वयं स्नान करने के लिए नदी में गया इधर श्रृगाल ने चपलता के कारण लालसा (इच्छा) वश उसके कान और हृदय खा लिये।

कोपागमन प्रलयकारी नदियों के दुराचार की परीक्षा नहीं करने का उदाहरण देकर कवि ने उनके प्रति अगाध भक्ति एवं श्रद्धा का परिचय ही दिया हैः

नदीनां च कुलानां च मुनीनां च महात्मनाम्।
परीक्षा न प्रकर्त्तव्या स्त्रीणां दुश्चरितस्य च।।[18]
(नदियों, वंशों, मुनियों, महापुरुषों तथा स्त्रियों के दुराचार की परीक्षा नहीं करनी चाहिए।)

लब्धप्रणाशम कथा में जल से परिपूर्ण तीव्रग्रामी विशाल नदियों को सावधानी और सुरक्षा से पार करने का निर्देश देता यह उदाहरण भी द्रष्टव्य है:

किंच कदाप्यस्याः पृष्ठतः कोऽपि रुमेश्यति, तन्मे महाननर्थः स्यात्। इति निश्चित्य तामुवाच–पिये, सुदेस्तरेयं महानदा। सापि कण्ठनिवेशितहस्तयुगता सोद्वेगा नदीपुलिनदेश उपविश्टा यावतिष्ठति।।[19]

(इस महानदी को पार करना बड़ा कठिन है इसलिए (प्रथम) धन को पार (किनारे) पर रखकर आता हूँ फिर तुम्हें अपनी पीठ पर चढ़ाकर आसानी से पार ले जाऊँगा। वह स्त्री भी गले में दोनों हाथ डाले हुए (उरोज ढकने के लिए) नदी के किनारे जब बैठी हुई थी।)

अज्ञानतावश यदि इनको पार करते समय सावधानी न बरती जाए तो अनिष्ट अनर्थ घटित होता है। उसे उद्घाटित करता यह उदाहरण अद्भुत, बोधगम्य एवं अत्यावश्यक दर्शनीय है–

ततो यावदग्रे किञ्चित्स्तोकं मार्गं यान्ति तावत्काचिन्नदी समासादिता। तस्य जलमध्ये पलाशपत्रमायातं दृष्ट्वा पण्डितेनैके नोक्तम्–
''आगमिष्यति यत्पत्रं तदस्मांस्तारयिष्यति'' एतत्कथयित्वा तत्पत्रस्योपरि पतितो यावन्नद्या नीयते ताक्तं नीयमानमव लोक्याऽन्येन पण्डितेन केशान्तं गृहीत्वोक्तम्।।[20]

इसके बाद जब वे ओर कुछ दूर आगे गये तो एक नदी मिल गयी। उसकी धारा में पलाश का पत्ता कहीं से बहता हुआ आ रहा था। उसे देखकर उनमें से एक ने कहा:

''आने वाला पत्ता हमें उस पार उतार देगा।'' यह कहकर वह मूर्ख पण्डित नदी में कूद पड़ा। जब यह नदी की धारा में बहने लगा तो दूसरे पण्डित ने उसकी चोटी पकड़ कर कहा:

काम सम्बन्धों को मर्यादित रूप प्रदान करने के लिए सभ्यता के चरमोत्कर्श से पूर्व ही भारतीय संस्कृति ने आदिकाल से ही 'विवाह संस्कार' को स्वीकार कर लिया था। यह पवित्र संस्कार भी नदियों के तटों (किनारों) पर ही सुसम्पन्न होते थे। दृष्टान्त हृदयस्पर्शी सहज, सरल एवं सरस है:

अथ राजादेशान्तै राजपुरुषैस्तं नदीतीरे नीत्वा सुवर्णलक्षेशा समं विवाह विधिना त्रिस्तनीं तस्मै दत्त्वा, जलयाने निधाय कैवर्ताः प्रोक्ताः भो! देशान्तरं नीत्वा कंस्मिश्चिदधिष्ठानेऽन्धः सपत्नीकः, कुब्जकेन सहं मोचनीयः।[21]

तब राजा के आदेश से उन राजपुरुषों ने उस अन्धें को नदी के किनारे पर ले जाकर विधि से विवाह कर त्रिस्तनी को एक लाख स्वर्णमुद्राओं के साथ उसे देकर उन्हें नौका में बैठाकर मल्लाहों से कहा:

इस प्रकार अनेक रूपों में निरूपित नदियों के विशद एवं व्यापक वर्णन के अतिरिक्त प्रमुख चार नदियाँ अपने नामोल्लेख के साथ इस कथा ग्रन्थ की शोभा बढ़ा रही है:

1. xxk नौ सौ नदियों को लेकर गंगा नित्य समुद्र में प्रवेश करती है।[22] पाताल गंगा से भरा हुआ तालाब[23] षाल्ङ्कायन नामक तपस्वी का गंगा स्नान और सूर्य पूजा के समय एक चुहिया तेज पंजों (नाखूनों) वाले बाज से पकड़े जाने[24] का निदर्शन हुआ है। पतित पावनी देवसलिला गंगा का उद्गम मध्य हिमालय में केदारनाथ के उत्तर में 12000 फीट ऊँचाई पर स्थित गंगोत्री नामक हिमकन्दरा (ग्लेशियर) से होता है। उत्तर भारत के विशाल भूभाग का सिंचन करती हुई प्रयाग में यमुना नदी से संगम कर यह नदी गंगासागर में (बंगाल की खाड़ी) सागर से मिलती है।[25]
2. ;euk सञ्जीवक नामवाला बैल यमुना के तीर पर उतरकर कीचड़ में फंस गया।[26] यमुना के जल से निर्मित अत्यन्त शीतल वायु द्वारा स्वस्थ शरीर से किसी प्रकार उठकर यमुना के किनारे पहुँचा।[27] पिंगलक नाम का

सिंह समस्त मृगों के साथ व्यास से व्याकुल होकर जल पीने के लिए यमुना के किनारे पहुँचा।[28] हमारा स्वामी पिंगलक तो जल पीने के लिए यमुना की जलयुक्त भूमि पर बैठा हुआ था।[29] भगवान शंकर का वाहन रूप वृषभ यमुना के तीरवर्ती प्रदेश में बालतृण (नवीन घास) चरते हैं।[30] यमुना तट पर मृगों का घास चरना आदि वर्णित है।[31] यमुना नदी का उद्गम यमनोत्री हिमनद से हैं जो गढ़वाल हिमालय में 6330 मीटर पर स्थित हैं।[32] इसकी कूल लम्बाई 1385 किमी. है। इसके तट पर दिल्ली–मथुरा–आगरा जैसे वृहद् नगर स्थित है।

3. flU/kq इसका संकेत मात्र प्राप्त होता है। यह अपनी नौ सौ नदियों को लेकर नित्य समुद्र में प्रवेश करती है।[33] पश्चिम में हिमालय से जुड़ी काराकोरम, हिंदुकुश, सफेदकोह, सुलेमान किरथर (सिंधु नदी के पश्चिम में स्थित) पर्वतमालाएँ क्रमशः दक्षिण में बढ़ती हुई अरबसागर (पश्चिम समुद्र) तक जा मिलती है।[34] इस प्रकार हिमालय पर्वतमाला अपनी विभिन्न शाखाओं द्वारा सिंधु और ब्रह्मपुत्र के पार से सागर तक जा पहुँचती है और भारतीय उपमहाद्वीप को सभी दिशाओं से अन्य भूभाग से पृथक् करने वाली प्राकृतिक सीमा बना देती है।[35]

तीन ओर से कैलाश–पर्वतमाला से घिरा राक्षस–ताल के पूर्व में स्थित मानसरोवर समुद्रतल से लगभग 15094 फीट ऊँचा 28 किमी. व्यास वाला आयताकार सरोवर है[36], जिसका निर्मल–नीलाभ जल मीठा और आन्तरिक उष्ण जल–स्त्रोतो के कारण सामान्य–तप्त है। इसमें हंस व मछलियाँ बहुत पाए जाते हैं।[37] ब्रह्मपुत्र, सिन्धु नदियाँ मानसरोवर के भूमि के भीतर मीलों दूर तक अन्तः स्त्रावित जल–स्त्रोतों से उद्भूत हुई है।[38] इसके तट पर स्फटिक–खण्ड रंगबिरंगे पत्थर भी हैं। भारतीय एवं तिब्बती धर्म–संस्कृति में समान रूप से समादृत मानसरोवर के पावन–सौंदर्य से अभिभूत विदेशी पर्यटक–विद्वान स्वेन हेडिन ने भी इसकी अद्भुत दिव्यता का साक्षात्कार किया है।[39]

4. f'kizk ब्राह्मणकुमार उज्जयिनी पहुँच गये। वहाँ शिप्रा नदी के जल में स्नान के बाद महाकाल नामक शिवजी को प्रणाम किया।[40] पश्चिमी मालवा अथवा अवन्तीराज्य की राजधानी उज्जयिनी की गणना प्राचीन सप्तपुरियों में की जाती है।[41] विशाल, अवन्तिका आदि नामों से विख्यात यह नगरी शिप्रा नदी के दाहिने तट पर वर्तमान 'उज्जैन' नगर से 3–4 किमी उत्तर में स्थित है।[42] चर्मण्वती की सहायक शिप्रा नदी का उद्गम पौराणिक मतानुसार ''शिप्र सरोवर''[43] या ''पारियाग पर्वत''[44]से माना जाता है। यह पुण्यसलिला–पापमोचिनी–उत्तरवाहिनी है।[45]

fu"d"k

पं. विष्णु शर्मा प्रणीत नीतिकथा ग्रन्थ पंचतंत्र में नदियों का सांगोंपांग निदर्शन हुआ है। न्याय, नीति, लोकाचार दर्शन की शिक्षा में प्रकृति के महनीय घटक के रूप में नदियां समादृत हैं। पं. विष्णु शर्मा ने नदियों से रक्षा की प्रार्थना कर उनके प्रति कर्त्तव्य निष्ठता एवं श्रद्धा का दिग्दर्शन करवाया है। इसमें नदियों के प्रवाह, उद्गम तथा कार्यो का स्वरूप भी वर्णित हैं। नदी तट पर तृण के जन्म को सफल बताकर कवि ने पर्यावरण में नदियों के स्थान को स्वतः व्याख्यायित किया है। नदियों के तट पर आदिकाल से स्नान–ध्यान, देवपूजा होती रही है जो भारतीय संस्कृति को अग्रजन्मना सिद्ध करती है। इसमें नदी तट पर साधना, तपस्या, अर्क की पवित्रता, प्रकर्षता की इष्टप्राप्ति और फलसिद्धिप्रदाता का महत्व वर्णित हैं।

नदियाँ इस महादेश की आत्मा कही जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होनी चाहिए। काका कालेकर ने नदियों को 'लोकमाता' कहा। यह आभाणक अत्यंत मोहनीय और विशिष्ट हैं। गंगा, यमुना, सिंधु, शिप्रा का विविध प्रसङ्गो में वर्णन लोक में नदियों के महत्व, उपादेयता और स्थान को स्वतः उपस्थापित करता हैं। पुण्यशलीला, पापमोचिनी, जन–जन की आस्था और श्रद्धा की प्रतिक स्वरूप ये नदियाँ आदि– अनादि काल से लोक मंगल का पुण्य कर्म अनवरत कर रही हैं। यदि वर्तमान परिदृश्य पर दृष्टिपात करे तो हम पाते हैं कि शोध्य विषय प्रकरण कथाग्रंथ में विवेचित नदियां अपने अस्तित्व के लिए संकट ग्रस्त हैं। विशाल भू–भाग को सींचने, पेयजल और उद्योग जगत की जल आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाली भगिनी, मातृ स्वरूपा नदियों को अपने वैदिक, पौराणिक व साहित्ययिक मूल स्वरूप में लौटाने हेतु गहन चिंतन की आवश्यकता हैं।

विषय अत्यंत गम्भीर हैं तदनुसार चिंतन भी आवश्यक हैं। मेरा वेदना की अतिष्यता से समग्र समाज से आग्रह हैं कि नदियाँ से सह संबंध बनावे। उन्हे माता, भगिनी आदि संबंध में बाँधे। मेरी सम्मति में यदि नदियाँ अपने मूल स्वरूप में लौट जाए तो मानव जीवन को खुशी, उत्साह और आनंद से भर देगी।

विवेचित नदियों की परीक्षा न करके उनके संरक्षण व संवर्धन पर पुर्नविचार की आवश्यकता है। मुख्यरूप से गंगा, यमुना, सिन्धु एवं शिप्रा का वर्णन भी जीवन में नदियों के यथार्थ महत्व को ही उद्घाटित करता है। विवेचित नदियों के लोकमंगल के पुण्यकर्म से आदर्श शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए तदनुसार सदैव सदाचार, सत्यनिष्ठता व परोपकार के मार्ग पर अग्रसर रहना चाहिए।

lUnHk lph

1. कथामुखम् – मित्रभेदः (पंचतंत्रस्य प्रथमं तन्त्रम्)।
2. मित्रभेदः – 6।
3. मित्रभेदः – 26।
4. मित्रभेदः – 29।
5. मित्रभेदः – 148।
6. मित्रभेदः – 187 के बाद का गद्य।
7. मित्रभेदः – 223।
8. मित्रभेदः – 223।
9. मित्रसम्प्राप्तिः 91।
10. मित्रसम्प्राप्तिः 143।
11. काकोलूकीयम् 7।
12. काकोलूकीयम् 95।
13. काकोलूकीयम् 104 के बाद का गद्य।
14. काकोलूकीयम् 12।
15. काकोलूकीयम् 16।
16. लब्धप्रणाशम् 33 के बाद की कथा।
17. लब्धप्रणाशम् 37।
18. लब्धप्रणाशम् 41, कथा–10।
19. लब्धप्रणाशम्, कथा 12।
20. मूर्खपण्डितकथा – अपरीक्षितकारके।
21. अन्धक–कुब्जक–त्रिस्तनी कथा–अपरीक्षितकारकम्।
22. मित्रभेदः (टिट्टिभी–टिट्टिभ कथा) श्लोक 359 से पहले का गद्य।
    टिट्टिभ्याह–भो कान्तः, यत्र जाह्नवी नवनदी शतानि गृहीत्वा नित्यमेव प्रविशति, सिन्धुश्च।
23. 82 के बाद की कथा का गद्य – काकोलूकीयम् (कथा–1) –
    अस्ति महाह्रदो विविक्ते प्रदेशे स्थलमध्यगतः पाताल गंगा जलेन रुदैव पूर्णः।
24. काकोलूकीयम् – कथा 11–
    अस्ति कस्मिंश्चिदधिष्ठाने शालऽायनो नाम तपोधनो जाह्नव्यां स्नानार्थं गतः।

25. द्विवेदी कै.ना., का.की.कृ. भौ.प्रत्य., पृ.96।

26. मित्रभेद – श्लोक 18 के बाद का गद्य।
संजीवकाभिधानो यमुनाकच्छमवतीर्णः सन्पऽ पूरमा साद्य कलितचरणो युगभैं विधाय निषसाद।

27. मित्रभेद – श्लोक 19 के बाद का गद्य।
यमुनासलिलमिश्रैः शिशिरतरवातैराप्यायितशरीरः कथंचिदप्युत्थाय यमुनातटमुपपेदे।

28. मित्रभेद – श्लोक 20 के बाद का गद्य।
कदाचित् पिँलो नाम सिंहः सर्वमृगपरिवृतः पिपासाकुल उद्‌गपानार्थ यमुनातटमवतीर्णः।।

29. वही – अयं तावदस्मत्त्स्वामी पिँलक उदकग्रहणार्थं यमुनाकच्छमवतीर्य स्थितः।

30 मित्रभेद – ष्लोक 136 के बाद की कथा का गद्य।
महेश्वरेण परितुष्टेन कालिन्दी परिसरे षपपाग्राणि भक्षयितुं समादिष्टः।

31. मित्रभेद – श्लोक 161 के बाद का गद्य।
सकलमृगपरिवृतो यमुनाकच्छमवलीर्योदक ग्रहणं कृत्वा स्वेच्छया तदेव वनं प्रविष्टः।।

32. भारत का भूगोल डॉ. सुरेशचन्द्र बंसल मिनाक्षी प्रकाशन मेरठ पृ. 94।

33. मित्रभेद – श्लोक 359 से पहले का गद्य (टिट्टिभी–टिट्टिभ कथा)।
टिट्टिभ्याह–भो कान्तः, यत्र जाह्नवी नवनदी शतानि गृहीत्वा नित्यमेव प्रविशति, सिन्धुश्च।

34. Base SC land and people of Himalaya, P.99; शर्मा देवीदत्त, कालिदास की कला और संस्कृति, पृ. 84।

35. Robinson H.Monsoon Asia, P.99; विशेष द्रष्टव्य, अ.1 भारतीय पर्यावरण : संक्षिप्त परिचय (पृ. 40)।

36. ISO - Mavang ISO-sinpoche (पवित्र झील) उत्तर में कांप्रीपोचे, दक्षिण में गुरलामान्धता पर्वत स्थित।Swen Hedin, Jrans Himalaya Vol.2, P.110-11.

37. द्विवेदी कै.ना.का.की.कृ.भौ.प्रत्य., पृ. 140।

38. कल्याण–तीर्थांक, पृ. 39–40।

39. The jurquoise - blue surface of the Holy Lake, how beautiful, how fascinating! One seems to breathe more freely and easily, one feels pleasure in life. [Swen Hedin ogh P.189]

40. लोभाविष्ट चक्रधर कथा – अपरीक्षितकारकम् – तत्र सिप्राजले कृतस्नानाः महाकालं प्रणम्य यावन्निर्गच्छन्ति।

41. अयोध्या–मथुरा–माया–काशी–कांची–अवन्तिका। पुरी द्वारावती चैव सप्तैता माक्षदायिकाः।।

42. द्विवेदी कै.ना., का.की.कृ.भौ.प्रत्य. पृ. 215।

43. चतुर्वेदी सी.रा., अभिधान कोश, पृ. 173।

44. मार्कण्डेय पुराण 57. 19–20 [Law B.C., Geographical Aspect of Kalidasa's Works, P.38]

45. लाहा वि.च., वही, पृ. 549।

——==00==——